E-ISSN: 2664-603X
P-ISSN: 2664-6021
IJPSG 2019; 1(1): 50-53
Received: 26-01-2019
Accepted: 29-03-2019

डॉ. विनोद कुमार
पोस्ट डॉक्टोरेट, सिनियर अकेडमिक फैलो एवं विस्तार व्याख्याता राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, बहादुरगढ़, हरियाणा, भारत

Correspondence
डॉ. विनोद कुमार
पोस्ट डॉक्टोरेट, सिनियर अकेडमिक फैलो एवं विस्तार व्याख्याता राजनीति विज्ञान, राजकीय महाविद्यालय, बहादुरगढ़, हरियाणा, भारत

समकालीन विश्व में मानवाधिकार : विकासशील देशों के संदर्भ में

डॉ. विनोद कुमार

DOI: https://doi.org/10.33545/26646021.2019.v1.i1a.357

Abstract
प्रत्येक समाज के लिए यह परमआवश्यक है कि वहाँ पर रहने वाले प्रत्येक नागरिक को वो सभी सुविधिाएं एवं अधिकार प्रदान किए जांए जिनके माध्यम से वे अपना सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास कर सकें। दुनियों के प्रत्येक देश में मानवाधिकार का अस्तित्व पाया जाता है। वर्तमान समय में सभी लोकतान्त्रिक समाजों में स्वतन्त्रता, समानता तथा न्याय पर आधारित विश्व व्यवस्था स्थापिक करने के लिए यह आवश्यक है कि दुनियाँ में रह रहे प्रत्येक नागरिकों को वे अवसर उपलब्ध करवाएं जाएं जिनको प्राप्त करके अपने आपको समाज का अभिन्न अंग समझें। परन्तु पिछले कुछ वर्षों से यह देखा गया हकि मानवाधिकारों का व्यापक रूप से उल्लंघन हुआ है। विशेषकर 1990 के बाद एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था में राष्ट्र–राज्यों का विघटन हो रहा है तथा पैक्स–अमेरिकाना की प्रक्रिया बढ़ती जा रही है। प्रस्तुत लेख के माध्यम से विकासशील देशों में हो रहे मानवाधिकारों से संबंधित मुद्दों को उठाया गया है।
शोध प्रविधि : इस शोध पत्र को पूर्ण करने के लिए मुख्य रूप से द्वितीय स्रोतों का सहारा लिया गया है। इनमें विभिन्न पत्रिकाओं में छपे लेख तथा अनेक पुस्तक सम्मिलित हैं। यह लेख अन्तर्राष्ट्रीय सैद्धान्तिक समीक्षा, 2014 में भी प्रकाशित है।

Keywords: मानवाधिकार, एकध्रवीयवाद, तानाशाही, एकपक्षवाद, राष्ट्र–राज्य।

Introduction
''मानवाधिकार उल्लंघन'' शब्द ही विकासशील देशों की हिंसा, तानाशाही, जातिय हिंसा और महिलाओं के प्रति हिंसा को ही आमतौर पर नागरिकों के उल्लंघन के रूप में जाना जाता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानवाधिकारों का उल्लंघन और दूरूपयोग अति महत्वाकांक्षी एवं तानाशाही प्रवृति वाले राष्ट्रों एवं गैर–राज्य अभिनेताओं द्वारा होता रहा है।
बीसवीं शती के पूर्वार्द्ध में हुए दो विश्व युद्धों में जहां एक ओर भीषण रक्तपात, विध्वंस, विनाश और पाश्विकता का खुलकर तांडव हुआ, यहां तक कि अमेरिका ने जापान के दो शहरों हिरोशिमा और नागासाकी पर बम बरसा कर वहां न केवल असंख्य लोगों की जान ली अपितु लाखों लोगों को जीवन भर के लिए, अपंग बनाकर और उन्हें रोग–ग्रसित कर जीते जी नरक के कुम्भी पाक में फेंक दिया, वहीं त्रस्त मानवता ने मानवाधिकारों के संरक्षण के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो पता चलता है कि द्वितीय विश्व–युद्ध के दौरान मानवता पर अत्याचारों से समूचे विश्व को इस बात का गहरा आघात लगा कि जर्मनी जैसे विकसित और सभ्य देशों पर इस बात का विश्वास नहीं किया जा सकता कि वे अपने ही लोगों के मूल मानव अधिकार सुनिश्चित करेंगे! अतः विश्व शक्तियों ने भी यह महसूस किया कि विश में सभी लोगों के अपने–अपने देशों में उलब्ध अधिकारों के अलावा मूल मानव अधिकार भी हैं।[1]

मानवाधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठन
विश्व शान्ति और सुरक्षा के लिये द्वितीय युद्धोत्तरकाल में निर्मित संयुक्त राष्ट्र संघ में 10 दिसम्बर, 1948 को मानव अधिकार सार्वभौमिक घोषणा जारी की और तत्पश्चात् 1996 में उसने अन्तर्राष्ट्रीय नागरिक और राजनीतिक अधिकार अभिसमय और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार अभिसमय पारित कर उन्हें विश्व के अनुसमर्थन के लिये जारी किया। तत्पश्चात्, संयुक्त राष्ट्र संघ ने बाल अधिकार अभिसमय भी पारित किया। यही नहीं, महिलाओं के विरूद्ध भेदभाव समाप्त करने तथा उनके अधिकारों को सुरक्षित करने के बारे में कई अभिसमय और घोषणाएं जारी की गई। इन घोषणाओं और अभिसमयों को क्रियान्वित करने के लिए विश्व के भिन्न–भिन्न देशों में अपने नागरिकों के अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्त्वावधान में कई कानून बनाये और उपाय किये।[2]

मानवाधिकार किसी भी सभ्य समाज के विकास का मूल आधार होते हैं। इसलिए मानवाधिकार की रक्षा आज एक विश्वव्यापी अभियान बन चुका है। आम नागरिक से लेकर स्वयं सेवा संगठन, मीडिया और सरकारें सभी इस अभिमान में शामिल हैं। मानवाधिकारों की रक्षा का आश्वासन देने वाली अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संधियां और राष्ट्रीय कानून अस्तित्व में हैं। विभिन्न देशों की न्यायपालिकाएं भी मानवाधिकारों के उल्लंघन सम्बन्धी मामलों का गंभीर संज्ञान ले रही हैं और उल्लंघन कर्त्ताओं को दण्ड तथा पीड़ितों को न्याय प्रदान कर रही हैं इसके बावजूद विश्व के करोड़ों लोगों के लिए 'सभी के लिए सभी मानवाधिकार' का नाम एक स्वप्न है, अर्थात् विश्व में मानवाधिकारों की वर्तमान स्थिति संतोषजनक नहीं है।[3]

विकासशील देशों में मानवाधिकारों का हनन

जहाँ तक तीसरे विश्व के देशों का प्रश्न है तो यहाँ की संस्कृति और सामाजिक–आर्थिक वास्तविकताओं के सदंर्भ में एक असाधारण अंतर यह है कि इनकी विविध सामाजिक आर्थिक व्यवस्थाएँ मानवाधिकारों के प्रभावी संरक्षण और समर्थन के लिए सहमति प्रदान नहीं करते। अधिकतर विकासशील देशों में मानवाधिकारों का हनन एक सामान्य लक्षण है यहां पर राजनीति का अपराधीकरण और उत्तरादात्यिव का अभाव प्रतिदिन का नियम बन गया है न्यायिक व्यवस्था से थोड़ी सहायता के साथ राज्य की शक्ति का पाश्वीकरण, राज्य के दमन के रूप में प्रदर्शित होता है। अधिकतर तीसरे विश्व के देशों में आर्थिक विकास की स्थिति और राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया से संबंधित मुद्दों ने मानवाधिकार का हनन करने वाली परिस्थितियों को जन्म दिया है।[4] जिसके परिणामस्वरूप पाश्चात्य जगत तृतीय विश्व के देशों की राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता की रक्षा, आर्थिक समृद्धि, मानवाधिकार लोकतन्त्र तथा स्थाई सरकार के नाम पर हस्तक्षेप कर रहा है जिसके कारण राष्ट्र–राज्य व्यवस्था का विघटन हो रहा है। चैकोस्लावाकिया, इथोपिया, भूतपूर्व सोवियत संघ तथा युगोस्लाविया के उदाहरण इस संदर्भ में देखे जा सकते हैं।[5] रजनी कोठारी के अनुसार संपूर्ण विश्व में नया रणनीतिक, सैनिक दर्शन और नियोजन अमेरिका ही करता आया है चाहे वह पूर्व सोवियत संघ के गणराज्यों का मामला हो, पूर्व यूगोस्लाविया हो, इस्लामिक बहुराष्ट्रीयता के दावे हों, इजराइल फिलिसीनी टकराव हो, दक्षिण अफ्रीका का मामला हो या फिर चीन की विस्तारवादी महत्वकांक्षाएं हो हर जगह पैक्सअमेरिकाना की प्रक्रिया को देखा जा सकता है। इस प्रक्रिया को लोकतन्त्र एवं मानवाधिकारों के सरंक्षण के नाम पर वैधता दी जा रही है। लेकिन इस प्रकार से मानवाधिकारों का संरक्षण एवं लोकतंत्र के समतावादी स्वरूप को प्राप्त करना, न तो बहुध्रुवीय है, न बहुलतावादी और न ही बुलतावादी सभ्यतामूलक विचार का समर्थन, यह तो एक युद्धरत लोकतन्त्र है इस प्रक्रिया से निश्चित रूप से विश्व शक्ति संतुलन असंतुलित हो गया है।[6]

यह गहरी चिन्ता एवं खेद का विषय है कि जहां विश्व के बहुत से देशों में लोकतांत्रिक सरकारें स्थापित हो रही हैं वहीं उन सभी देशों में जनसाधारण को मानवाधिकारों से वंचित किया जा रहा है।[7] कई देशों में मानवाधिकारों का खुले आम उल्लंघन हो रहा है। इन उल्लंघनों के कई रूप हैं जैसे युद्ध में बच्चों और महिलाओं के प्रति हिंसा, यौन उत्पीड़न, यातना, नस्ल और जाति के आधार पर हिंसां और भेदभाव, अमानवीय तरीकों से मृत्युदण्ड आदि मानवाधिकार उल्लंघन के कुछ मुख्य विश्वव्यापी रूप है।[8] एमनैस्टी इंटरनेशल की रिपोर्ट के अनुसार विश्व के लगभग 107 ऐसे राष्ट्र हैं जहां मानवाधिकारों का अतिक्रमण व दमन हो रहा है। पाकिस्तान के बारे में भी एमनैस्टी इण्टरनेशल का ऐसा ही आकलन है कि वहां भी कई वर्षों से मानवाधिकारों का बेरहमी से दमन किया जा रहा है। विरोधियों को दबाने के लिए पाकिस्तानी शासक अत्यंत कठोर रवैया अपनाते हैं। एशिया अफ्रीका एवं लेटिन अमेरिका के अन्य देशों में आतंकित करने वाले कानून, बिना कारण बताये की जाने वाली गिरफ्तारियां, दमन, ज्यादती, यातना के अमानवीय तरीके व मूलाधिकारों से लोगों को वंचित किया जाना भी चिन्ता का प्रमुख विषय है। फिलिस्तीनियों के साथ खुले तौर पर विगत कई वर्षों से जो अमानवीय व्यवहार एवं घटनाएं हो रही हैं उसे दुनियां तमाशगीर बन देख रही है। धर्म के नाम पर भी अनेक देशों में मानव अधिकारों को कुचला जा रहा है विशेषकर इस्लामी देशों में यह स्थिति दयनीय है अनेक देशों में आजादी एवं सामाजिक न्याय हेतु, जूझ रहे स्त्री–पुरुषों को जेल में बंद करके रखा गया। भारत, बांग्लादेश, पाकिस्तान, इण्डोनेशिया, सिंगापुर, ट्यूनेशिया, श्रीलंका, ब्राजील, अर्जेन्टाइना, चिल्ली, ग्वाटेमाला, नामीबिया, फिलिपाइन्स इत्यादि में मानवीय यानाता व अन्यायपूर्वक हजारों स्त्री–पुरुषों, को जेल में वर्षों से डाल रखा है। रोम स्थित जन–न्यायाधिकरण से सुनवाई के दौरान फैसला दिया है कि विश्व की शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ न केवल जनता के अधिकारों का हनन कर रही है बल्कि जीवनदायिनी पर्यावरणी प्रणालियों को नष्ट करने का अपराध भी कर रही है।[9] इसी प्रकार अफगानिस्तान का दर्द किसी से छिपा नहीं है। अफगानिस्तान के विरुद्ध अमेरिकी आक्रमण का मुख्य मुद्दा मध्य एशिया के विशाल तेल व प्राकृतिक गैस भण्डार थे। मध्य एशिया की कैस्पियन घाटी के अन्तर्गत तुर्कमेनिस्तान, अजरबेजान, अर्मेनिया, उजबेकिस्तान आदि देश आते हैं जहाँ एक आकल के अनुसार 200 अरब बैरल तेल व 7.9 खरब घनमीटर प्राकृतिक गैस के विशाल भण्डार है जो अमेरिकी तेल भण्डार का लगभग 70 गुना है जिसकी कीमत लगभग 20,000 अरब रुपेय आंकी गई है। परन्तु इन भण्डारों के दोहन और व्यापार में सबसे बड़ी बाधा इस क्षेत्र की भौगोलिक और राजनीतिक स्थिति है। इन तेल भण्डारों पर कब्जा जमाने के लिए शक्तिशाली राष्ट लगातार प्रयासरत रहे हैं, विशेषकर अमेरिका इस क्षेत्र पर रूसी प्रभाव को पूरी तरह समाप्त कर अपनी मनमानी चलाने के लिए तरह–तरह के तरीके अपनाता रहा हैं इसके लिए 'अनंत न्याय के लिए अंतहीन युद्ध', 'जो हमारे साथ नहीं है, वह हमारे विरुद्ध रहा है', जैसे नारे अमेरिकी राष्ट्रपति और अमेरिकी प्रशासन तन्त्र बुलन्द कर चुका है।[10] अमेरिका के 'अनंत न्याय' का अर्थ दुनियां के संपूर्ण प्राकृतिक संसाधन उनके लिए है और जिस भी देश क्षेत्र के लोग यह स्वीकार नहीं करेंगे, वे अमेरिका के दुश्मन होंगे। यूरोप के साम्राज्यवादी देश तथा रूस और चीन भी इस छीना–छपटी में शामिल होकर लूट के माल में हिस्सा लेना चाहते रहे हैं। इसके लिए विशेषकर पूर्व सोवियत संघ के क्षेत्रीय देशों में विद्रोह, हत्याएं और सशस्त्र झड़पें कराई गई।[11] इसके अतिरिक्त जब अमेरिका अफगानिस्तान पर सैनिक कार्यवाही कर रहा था तो अफगानिस्तान से असंख्य शरणार्थियों ने पाकिस्तान में शरण ली। उन्हें कड़ाके की सर्दी में खुले आसमान के नीचे रहने को बाध्य होना पड़ा। संयुक्त राष्ट्र संघ भी शरणार्थियों की काफी संख्या के कारण उन्हें शिविर आदि उपलब्ध कराने में सक्षम नहीं हो पा रहा था। छोटे–छोटे बच्चे, बुजुर्ग, महिलाएं और पुरुष कड़ाके की सर्दी में खुले मैदान में दिन और रात बिता रहे थे।[12] इससे उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था।

सोवियत संघ के पतन के बाद एकध्रुवीय विश्व में अमेरिका द्वारा इराक के प्रति जो रवैया अपनाया गया, वह भी हस्तक्षेप एवं मानवाधिकारों के दमन का एक ज्वलन्त उदाहरण है। इराक पर अमेरिका के नेतृत्व में सामर्थ्यवान देशों द्वारा आक्रमण किया गया और कब्जे के बाद राजनीतिक कैदियों के साथ गैर राजनीतिक कैदियों की तरह अमानवीय व्यवहार की असंख्य घटनाएं सामने आई। फिर आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष के बहाने आम लोगों की आवाज को दबाया गया। इसके साथ ही मानवाधिकार उल्लंघन

की नई–नई परिभाषाएं सृजीत की गई और मानवाधिकार संरक्षण की मूल भावना दरकिनार होती चली गई।[13] इराक युद्ध शुरू होने पर जब इराकी फौजों ने अमेरिकी सैनिकों की गिरफ्तार करके दूरदर्शन पर दिखाया तो अमेरिकी राष्ट्रपति ने मानवाधिकारों की दुहाई देते हुए जिनेवा संधि में वर्णित युद्धबंदियों के व्यवहार का मामला उठाया, परन्तु अमेरिका के प्रसिद्ध समाचार पत्र वाशिंगटन पोस्ट द्वारा इराक की अबु–गरीब जेल से गुप्त रूप से ली गई तस्वीरें प्रकाशित की गई तो मानवाधिकारों और जिनेवा संधि का दम भरने वाले अमेरिका पर प्रश्न चिन्ह लग गया। पूरी दुनिया अमेरिकी सेना की इस अमानुषिकता को देखकर स्तब्ध रह गई तथा मानवाधिकार आयोग एवं संयुक्त राष्ट्र संघ पर प्रश्न चिन्ह लग गया।[14] यह भी विडम्बना ही है कि संयुक्त राष्ट्र के सबसे शक्तिशाली माने जाने वाले मानवाधिकार आयोग को अमेरिका के इशारे पर भंग कर दिया।

आयोग की ओर से की गई अधिकारिक घोषण से पहले संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा ने मार्च, 2006 को विविधवत प्रस्ताव (संख्या : 60/251) पारित कर आयोग को भंग किए जाने और मानवाधिकार परिषद का गठन करने का निर्णय लिया। नई घोषणा के अनुसार मानवाधिकार मामले अब संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकार परिषद देखेगी। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग की तत्कालीन उच्चायुक्त लुइस आर्बन ने अपने अन्तिम संदेश में कहा ''दुनियां के लाखों–करोड़ों लोग अपनी सुरक्षा, आजादी और न्याय के लिए आशा और उम्मीद से संयुक्त राष्ट्र की ओर देखते हैं उस विश्वसनीयता को बनाए रखने की कठिन परीक्षा सामने है। संयुक्त राष्ट्र की ओर से नवगठित मानवाधिकार परिषद को दुनियां भर में मानवाधिकारों के हो रहे बर्बर उल्लंघन को रोकने के लिए शीघ्र और आवश्यक आपातकालीन कदम उठाने की आवश्यकता है, ताकि साधारण व्यक्ति के संरक्षण की बढ़ती खई को अविलम्ब पाट सकें। तभी संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के सिद्धान्तों की सार्थकता सिद्ध हो पाएगी।''[15] आर्बर का संदेश निश्चत रूप से आकांक्षाओं से भरे भविष्य की ओर इशारा करने वाला था।

मानवाधिकार आयोग के प्रति अपने संबोधन में 7 अप्रैल, 2005 को जिनेवा में तत्कालीन महासचिव कोफी अन्नान ने संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार तन्त्र में सुधार के लिए अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि ''विकास के बिना इस प्रकार की सुरक्षा को प्राप्त नहीं कर सकते और सुरक्षा के बिना विकास भी संभव नहीं कर सकता है। परन्तु मैं इस बात पर भी जोर देना चाहता हूँ कि मानवाधिकारों के सार्वभौमिक सम्मान के अभाव में हम इन दोनों को प्राप्त नहीं कर सकते। जब तक इन सभी सिद्धान्तों ने एक नए युग में प्रवेश किया है। पिछले 60 वर्षों में अधिकतर समय हमारा ध्यान अधिकारों को उच्चारित करने, उन्हें संहिताबद्ध करने तथा प्रतिष्ठापित करने में लगा रहा। इस प्रयास ने कानूनों, और तंत्रों का एक उल्लेखनीय ढांचा प्रस्तुत किया– सार्वभौम घोषणा अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाएं या प्रतिज्ञापत्र और इससे भी बढ़कर बहुत कुछ इस तरह के कार्यों को कुछ क्षेत्रों में अभी जारी रखने की आवश्यकता है परन्तु अब घोषाणओं का युग समाप्त हो रहा है और इनका स्थान अब क्रियान्वयन ने ले लिया है और होना भी यही चाहिए।''[16] अन्नान ने स्पष्ट किया है कि मानवाधिकार आयोग ने अपनी विश्सनीयता खो दी है जिससे संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है और अब यहां टुकड़ों में सुधार करना पर्याप्त नहीं होगा अपितु एक साथ व्यापक प्रयास किया जाना जरूरी है। इसलिए मानवाधिकार परिषद् को यह उत्तरदायित्व निभाना हैं। हालांकि संयुक्त राष्ट्र संघ की पहले ही ऐसी परिषदें एवं अभिकरण हैं जो इसके मुख्य कार्यों–सुरक्षा और विकास से जुड़े हुए हैं।[17] परन्तु इस नए निकाय के लिए जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात होनी चाहिए, वह है मानवाधिकारों के उत्तरदायित्व को निभाने की क्षमता, जिसकी इससे अपेक्षा की जा रही है। मानवाधिकार परिषद का चौथा सत्र 12 से 13 मार्च, 2007 को जिनेवा में सम्पन्न हुआ। यह सत्र अन्तर्राष्ट्रीय मानवीय कानूनों के मूल्यांकन एवं क्रियान्वयन के संदर्भ में महत्वपूर्ण रहा। मानवाधिकार परिषद के संस्थाकरण की प्रक्रिया में गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ने महत्वपूर्ण योगदान दिया ताकि यह संस्था पारदर्शी एवं लचीली बन सके और मानवाधिकारों के उल्लंघन के संबंध में सार्वभौमिक रूप से निगाह रखी जा सके। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन ने परिषद की भावी क्षमताओं तथा पारदर्शिता के लिए ''वैश्विक सामयिक समीक्षा'' कार्यप्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए नया आयाम दिया।[18] यहाँ गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की ओर से क्यूबा के प्रतिनिधिमंडल ने मानवाधिकार परिषद की कार्य प्रणाली के सदंर्भ में कहा ''मानवाधिकार परिषद द्वितीय वर्ष के प्रारम्भिक चरण में प्रवेश कर रही है। गुटनिरपेक्ष आन्दोलन इस संस्था को अधिक सुसंगत एवं रचनात्मक बनाने के लिए इसके ''संस्थात्मक निर्माण की प्रक्रिया'' के प्रति पूर्ण रूप से प्रतिबद्ध है।''[19]

निष्कर्ष

इस प्रकार मानवाधिकारों के संरक्षण की दिशा में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सभी देशों को अपनी–अपनी भूमिका निभानी होगी। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कितने ही कठोर क्यों न हो वह तब तक लागू नहीं हो सकते जब तक उन्हें सम्बद्ध देशों के राष्ट्रीय कानून में शामिल न किया जाए और उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय संस्थानों का समर्थन प्राप्त न हो। विश्व के अनेक देशों में प्रत्येक नागरिक द्वारा सभी मानवाधिकारों का इस्तेमाल सुनिश्चित करने की दिशा में कई बाधाएं आ रही हैं। जैसे अभी भी कई देशों में नागरिकों के अधिकारों के कारगर संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए बुनियादी ढाँचा ही नहीं है। यह स्थिति देशों में अधिक है जो भयंकर गृह युद्ध की ज्वाला से अभी हाल के वर्षों में ही बाहर निकले हैं। इस स्थिति को देखते हुए संयुक्त राष्ट्र द्वारा एक ओर जहां सरकारों को परामर्श देने की व्यवस्था को सृदृढ बनाया गया वहीं दूसरी ओर तकनीकी सहयोग कार्यक्रम का भी विस्तार किया गया ताकि लोकतन्त्र, विकास और मानवाधिकारों को प्रोत्साहित किया जा सके और इन अधिकारों को समुचित प्रोत्साहन देने की उनकी क्षमता में वृद्धि की जा सके। मानवाधिकारों की समस्या से निबटने के लिए राष्ट्रीय आचारण करने का प्रयत्न करें। मानवाधिकारों के उल्लंघन की शिकायतों के सम्बन्ध में संबंधित निकायों को सही समय पर अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत करने चाहिए तथा इस संदर्भ में संबंधित निकायों को सही समय पर अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत करने चाहिए तथा इस संदर्भ में आवश्यक दम उठाए जाने चाहिए। जहाँ तक एक ध्रुवीयवाद का प्रश्न है तो इस संदर्भ में विकासशील देशों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर जनमत विकसित करना चाहिए तथा आर्थिक कूटनीति को प्रोत्साहिन देना चाहिए क्योंकि कोई भी परिवर्तन अचानक नहीं होता है इसका स्वभाव क्रमिक होता है।

संदभ

1. सनतोष खन्ना, ''12वीं शताब्दी में मानवाधिकार'', स्वयं (सम्पा.), 21वीं शती में मानवाधिकार : दशा और दिशा, विधि भारती परिषद, 2001, पृ. 31–32, तथा अरूणा शर्मा (सम्पादिकीय) मानवाधिकार : नई दिशाएं, अंक–2, 2005
2. वही.
3. जगजीत सिंह, मानवाधिकार : वायदे और हकीकत, सन्मार्ग प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000. पृ. 9
4. नचिकेता सिंह, ''मानवाधिकार : विभिन्न अर्थ'' तपन बिसवाल, (संपा.) मानवाधिकार जेन्डर एवम् पर्यावरण, वीवो बुक्स, नई दिल्ली, 2008, पृ. 69
5. ए.एस. नारंग, ''नैम इन द न्यू मिलेनियम : चेलेन्जेज एण्ड इश्यूज'' प्रोमिला श्रीवास्तव, (सम्पा.), भारत का भूमंडलीकरण,

वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 94.
6. रजनी कोठारी, ''जनता से डरते अभिजन और कमजोर होता राष्ट्र राज्य,'' अभय कुमार दुबे (सम्पा.) भारत का भूमण्डलीकरण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ. 94
7. प्रेमशंकर खरे, मानवाधिकार के मूलाधार, रूपा प्रत्यूष, इलाहाबाद, 2001, पृ. 7
8. सिंह, संख्या 3.
9. जी.पी. नेमा, ''विश्व परिदृश्य में मानवाधिकार–अवधारणा एवं यथार्थ : एक विश्लेषण'', रमेश प्रसाद गौतम, (सम्पा.) मानव अधिकार : विविध आयाम, विश्वविद्यालय प्रकाशन, सागर, 2003, पृ. 42
10. दैनिक ट्रिब्यून, नई दिल्ली, 1 मार्च, 2003, पृ. 12
11. वही,
12. खन्ना, संख्या 1, पृ. 32.
13. प्रभात रंजन दीन. ''बदलते दइौर का मानवाधिकार'', सहारा समय, नई दिल्ली, 8, अप्रैल 2006
14. अरुंधति राय, ''सामान्य जन के लिए साम्राज्य की दिग्दर्शिका'', हिन्दुस्तान, नई दिल्ली, अप्रैल, 2003
15. दीन, संख्या 13
16. ''मानवाधिकारों के सिद्धान्त ने एक नए युग में प्रवेश किया है'', यू.एन न्यूज, वॉ. 60, नं. 4, अप्रैल, 2005, पृ. 13
17. वही, पृ. 14
18. ''नैम स्टेटमेन्ट् टू द फोर्थ एच.आर.सी.'' न्यूज फॉम नॉन–अलाइन्ड वर्ल्ड, वॉ. 27, नं. 31, 1 मई 2007, पृ. 1–1
19. वही, पृ. 3